दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

सुरक्षित:06.01.2010

निर्णय की तिथि:07.01.2010

रि.या.(आप.) सं.1490/2009 और आप.वि.आ. सं.12273/2009

खुरवेश उर्फ पप्पु उर्फ पहलवान ..... याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री विकास अरोड़ा, अधिवक्ता।

बनाम

राज्य और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री विकास पहवा, अतिरिक्त स्थायी अधिवक्ता के साथ श्री पीयूष सिंह, अधिवक्ता।

कोरम:--

माननीय श्री न्यायमूर्ति ए.के. सीकरी

माननीय श्री न्यायमूर्ति अजीत भरीहोक

1. क्या स्थानीय समाचार पत्रों के संवाददाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है?
2. रिपोर्टर को दिया जाना है या नहीं?
3. क्या निर्णय डाइजेस्ट में दिया जाना चाहिए?

न्या., ए.के. सीकरी,

1. याचिकाकर्ता को राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3 की उप-धारा 2 (जिसे इसके बाद "अधिनियम" कहा जाता है) के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए पुलिस आयुक्त, दिल्ली द्वारा 8 जून, 2009 को पारित आदेशों के माध्यम से निरुद्ध किया गया है, जिसमें इस बात का संतोष दर्ज किया गया है कि याचिकाकर्ता को लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु किसी भी प्रकार से प्रतिकूल कार्य करने से रोकने हेतु इस तरह का निरोध आवश्यक है। इस आदेश को 18 जून, 2009 को उपराज्यपाल/प्रत्यर्थी सं.2 द्वारा अनुमोदित किया गया था। सलाहकार बोर्ड ने भी निरोध के इस आदेश की पुष्टि की है, जिसके आधार पर प्रत्यर्थी सं. 2 ने 5 अगस्त, 2009 को आदेश पारित किया जिसमें निर्देश दिया गया है कि याचिकाकर्ता निरोध की तिथि अर्थात् 8 जून, 2009 से 12 महीने की अवधि हेतु निरुद्ध रखा जाएगा। वर्तमान याचिका दायर करने से पूर्व, याचिकाकर्ता ने उपरोक्त आदेशों को वापस लेने हेतु प्रत्यर्थी सं.2 के समक्ष एक अभ्यावेदन दिया था, परंतु इसमें कोई सफलता नहीं मिली और प्रत्यर्थी सं. 2 ने 9 सितंबर, 2009 को उक्त अभ्यावेदन को अस्वीकृत कर दिया। कोई अन्य विभागीय उपाय न होने के कारण, याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है जिसमें उत्प्रेषण रिट जारी करने की मांग की गई है, जिससे 5 अगस्त, 2009 के उक्त निरोध आदेश को अभिखंडित करते हुए याचिकाकर्ता को जेल से रिहा करने का निर्देश दिया गया है।

2. इससे पहले कि हम याचिकाकर्ता की शिकायत को उजागर करें, जिसके आधार पर आक्षेपित आदेश को चुनौती दी गई है, 8 जून, 2009 के उक्त निरोध आदेश में निहित तथ्यों पर ध्यान देंना उचित होगा ताकि इस प्रकार के आदेश के पारित होने का आधार पता लगाया जा सके। 8 जून, 2009 के आक्षेपित आदेश में निरोध के आधार सम्मिलित हैं और ये आधार इन टिप्पणियों से शुरू होते हैं कि याचिकाकर्ता एक दु:साहसिक चरित्र का व्यक्ति है और पुलिस स्टेशन नंद नगरी, दिल्ली क्षेत्र का एक घोर अपराधी है। यह भी आरोप लगाया गया है कि उसने वर्ष 1996 में 18 वर्ष की आयु में अपनी आपराधिक गतिविधियों की शुरुआत की और 32 आपराधिक मामलों में शामिल रहा, जिसमें स्वेच्छा से चोट पहुंचाना, गलत तरीके से किसी को रोकना, आपराधिक धमकी, जबरन वसूली, डकैती, बलात्कार, लोक सेवकों को उनके आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन करने में बाधा डालना, गैर-इरादतन हत्या, हत्या और हत्या का प्रयास आदि के अलावा शस्त्र अधिनियम के तहत दंडनीय कार्य करना शामिल है। यहां तक कि उसके विरूद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 107/151 के प्रावधानों के तहत निवारक कार्रवाई भी की गई थी। याचिकाकर्ता के आपराधिक रिकॉर्ड को इस प्रकार सारणीबद्ध किया गया हैः-

क्रमांक	मामला प्राथमिकी सं.	तिथि	धारा के तहत	पु.स्टे.	टिप्पणियां
1	164	5.4.96	308/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
2	912	26.12.96	341/323/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	समझौता किया।
3	240	29.3.97	25 क अधिनियम	सीमा पुरी	दोषमुक्त
4	544	10.8.97	341/324/314 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
5	167	24.3.98	323/341/376/506/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
6	297	6.5.99	324/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	समझौता किया।
7	502	16.10.00	324/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	समझौता किया।
8	603	25.12.00	392/397/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
9	66	10.2.01	382/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
10	57	16.2.01	307/34 भा.दं.सं.	एम. एस. पार्क	दोषमुक्त
11	146	25.3.01	392/397/411/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
12	305	3.4.01	392 भा.दं.सं.	साहिबाबाद	दोषमुक्त

				यूपी	
13	318	9.4.01	392 भा.दं.सं.	साहिबाबाद यूपी	उन्मोचित
14	324	12.4.01	392 भा.दं.सं.	साहिबाबाद यूपी	दोषमुक्त
15	181	19.4.01	393/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
16	154	22.4.01	186/353/307/34 भा.दं.सं.	गोकुल पुरी	दोषमुक्त
17	220	10.5.01	302/120-ख/34 भा.दं.सं. और 25/27 अधिनियम	नंद नगरी	दोषमुक्त
18	279	12.8.01	25 ए. अधिनियम	च. पुरी	पु.विचारण
19	225	30.4.03	384/386/511/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
20	258	15.5.03	186/353/332/307 भा.दं.सं. और 25/27 क. अधिनियम	नंद नगरी	पु.विचारण
21	344	6.6.04	341/394/397/307/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
22	280	9.7.04	394/468/471/31 भा.दं.सं.	सीमा पुरी	दोषसिद्ध
23	313	14.7.04	392/34 भा.दं.सं.	गोकुल पुरी	पु.विचारण

24	215	1.9.04	307/34 भा.दं.सं.	कंझावला	पु.विचारण
25	778	24.9.04	302/201/34 भा.दं.सं.	लोनी गाजियाबाद	पु.विचारण
26	491	19.10.04	309 भा.दं.सं.	सीमा पुरी	दोषमुक्त
27	580	4.7.07	25 क. अधिनियम	नंद नगरी	पु.विचारण
28	27	26.1.08	392/34 भा.दं.सं.	शाहदरा	पु.विचारण
29	156	22.3.08	341/323/386/380/511 /506/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	पु.विचारण
30	195	16.4.08	307/34 भा.दं.सं.	नंद नगरी	दोषमुक्त
31	18	23.4.08	186/353/307 भा.दं.सं. और 25/27 क. अधिनियम	विशेष सेल दिल्ली	पु.विचारण
32	डीडी नंबर 8-ए	28.3.09	107/151 दं.प्र.सं.	नंद नगरी	पु.विचारण

3. उक्त रिकॉर्ड के आधार पर, यह राय है कि याचिकाकर्ता इतना दु:साहसिक और खतरनाक अपराधी है कि लंबित विचारण में साक्षियों को जेल के बाहर उसकी उपस्थिति से भयभीत होने की संभावना है। टिप्पणी कॉलम से यह पता चलता है कि उक्त 32 मामलों में से याचिकाकर्ता को 17 मामलों में दोषमुक्त कर दिया गया है, एक मामले में उन्मोचित किया गया है, 3 मामलों के

परिणामस्वरूप समझौता हुआ है, एक मामले में दोषी सिद्ध किया गया है और 10 मामलों के संबंध में विचारण अभी भी लंबित है।

4. एक संक्षिप्त प्रपत्र में 32 मामलों के विवरण का उल्लेख करने के बाद, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, पुलिस आयुक्त ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध निरोध आदेश पारित करने हेतु 5 मामलों पर भरोसा किया, जिनके विवरण निम्नलिखित हैं:-

> "1. प्राथमिकी सं.27 दिनांक 26.1.2008 भा.दं.सं. की धारा 392/34 के तहत, पु.स्टे. शाहदरा, दिल्ली।
>
> 2. प्राथमिकी सं. 156/2008 दिनांक 22.03.2008 भा.दं.सं. की धारा 323/341/380/386/511/506/34 के तहत, पु.स्टे. नंद नगरी, दिल्ली।
>
> 3. प्राथमिकी सं. 195/2008 दिनांक 16.04.2008 भा.दं.सं. की धारा 307/34 के तहत, पु.स्टे. नंद नगरी, दिल्ली।
>
> 4. प्राथमिकी सं. 18/2008 दिनांक 23.04.2008 भा.दं.सं. की धारा 186/353/307 के तहत और 25/27 शस्त्र अधिनियम, पु.स्टे. विशेष सेल, नई दिल्ली।
>
> 5. डी.डी. सं.8-ए दिनांक 28.03.2009 दं.प्र.सं. की धारा 107/151 के तहत, पु.स्टे. नंद नगरी, दिल्ली।"

5. ऊपर उल्लिखित पहले मामले के संबंध में, जिसका विवरण इस आशय से दिया गया है कि शिकायतकर्ता श्री विनीत गुप्ता, जिसके घर में 26 जनवरी, 2008 को चार युवक घुसे और अपने भाई कुशल के कमरे में गए और कुशल का सामान ले गए अर्थात् 7-8,000/- रुपये, ड्राइविंग लाइसेंस, आयकर कार्ड, उसके बाएं हाथ की उंगली से सोने की अंगूठी और कुशल के दोस्त अमित की पतलून की जेब से पैसे भी ले गए, जो उस समय उसके साथ था। उन्होंने 27 ग्राम वजन की उसकी सोने की चेन भी छीन ली, जिस पर "जी" लिखा एक लॉकेट था। उनकी पहचान खुरवेश उर्फ राजिंदर (याचिकाकर्ता) और अजय पुत्र श्री गौरी शंकर के रूप में की गई थी। यद्यपि, 4 मार्च, 2008 को, जब परीक्षण पहचान परेड आयोजित की गई, तो अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा लगाए गए आतंक और भय के कारण, शिकायतकर्ता ने उनकी पहचान नहीं की। यह मामला अभी भी विचारण हेतु लंबित है।

6. दूसरा मामला, अर्थात् प्राथमिकी सं.156/2008, प्रेम कुमार साहू नामक व्यक्ति द्वारा दर्ज किया गया था, जिसने एक रिपोर्ट दर्ज कराई थी कि 21 मार्च, 2008 को दोपहर लगभग 2 बजे, याचिकाकर्ता, जो उसी इलाके का निवासी है, ने उसे रोका और धमकी दी कि अगर वह शांतिपूर्वक रहना चाहता है तो उसे 15000/- रु. का भुगतान करना पड़ेगा। दोपहर करीब डेढ़ बजे उसने पाया कि याचिकाकर्ता अपने भाई कमला और एक अन्य लड़के के साथ उसकी दुकान के शटर का ताला

तोड़ने की कोशिश कर रहा था, जब शिकायतकर्ता ने कमला को पकड़ने की कोशिश की और शोर मचाया, तो याचिकाकर्ता और उसके सह-अभियुक्त ने उसे मुक्का मारा और वहाँ से भाग गए। शिकायत दर्ज की गई और शिकायतकर्ता की पहचान पर कमला और हरि सिंह को गिरफ्तार कर लिया गया। याचिकाकर्ता को अग्रिम जमानत दे दी गई है और मामला विचारण हेतु लंबित है।

7. तीसरी प्राथमिकी सं.195/2008 दिनांक 16 अप्रैल, 2008 को धारा 307/34 के तहत दायर की गई जहां फिर से प्रेम कुमार साहू शिकायतकर्ता हैं और आरोप लगाया है कि उसके द्वारा पहले की प्राथमिकी दर्ज किए जाने के बाद, याचिकाकर्ता 16 अप्रैल, 2008 को प्रातः 10.20 बजे उसके पास आया और कहा कि उसने अपने विरुद्ध दर्ज मामले में जमानत प्राप्त करने में 80,000/- खर्च किए थे और इसलिए, उसने उसे धमकी दी कि वह उसे नहीं छोड़ेगा। उसने अपने भाई और दूसरे लड़के को उसे पकड़ने का निर्देश दिया और कहा कि वे उसे खत्म कर देंगे। कमल और उसके सहयोगी ने उसे पकड़ लिया और याचिकाकर्ता ने पिस्तौल निकाली और उसे मारने के लिए उस पर गोली चला दी। शिकायतकर्ता और उसके भतीजे/भांजे को चोटें आईं। 17 अप्रैल, 2008 को अमित उर्फ सोनू को गिरफ्तार किया गया और उसने अपने द्वारा किया गया अपराध स्वीकार कर लिया। 17 जनवरी, 2008 को गौरव को शस्त्र अधिनियम की धारा 25 के तहत गिरफ्तार किया गया था और याचिकाकर्ता को भा.दं.सं. की धारा 186/353/307

और शस्त्र अधिनियम की धारा 25 के तहत प्राथमिकी सं. 18/2008 के तहत गिरफ्तार किया गया था। अन्य अभियुक्तों को भी गिरफ्तार कर लिया गया। इन अभियुक्त व्यक्तियों ने परीक्षण जाँच परेड(टी.आई.पी.) कार्यवाही में भाग लेने से इंकार कर दिया। कमला ने भी 4 जून, 2008 को न्यायालय में अभ्यर्पण कर दिया और अपराध करना संस्वीकृत कर लिया। उसके बयान के अनुसार कुछ खोज भी की गई हैं। यद्यपि, विचारण के दौरान, शिकायतकर्ता, जिसे गोली भी लगी थी, अपने बयान से मुकर गया और उसने उस व्यक्ति को जानने से इंकार कर दिया जिसने उस पर गोली चलाई थी। आरोप है कि याचिकाकर्ता द्वारा अधिरोपित डर के कारण ऐसा हुआ। इस कारण से मामले में दोषमुक्ति की गई।

8. चौथी प्राथमिकी अर्थात् प्राथमिकी सं.18/2008 दिनांक 23 अप्रैल, 2008 भा.दं.सं. की धारा 186/353/307 के तहत और शस्त्र अधिनियम की धारा 25/27 के तहत है जिसमें पुलिसकर्मी शामिल हैं और मामला विचारण हेतु लंबित है।

9. पाँचवाँ मामला शांति भंग करने और अशांति और लोक शांति में बाधा उत्पन्न करने की आशंका से संबंधित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 107/151 के तहत 28 मार्च, 2009 को डीडी नं. 8-क से संबंधित है। *कलंदर* पर विचारण लंबित है। इन पाँच घटनाओं का वर्णन करने के बाद, पुलिस आयुक्त ने अपने आक्षेपित आदेश में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला है; -

"उपर्युक्त आपराधिक गतिविधियाँ स्पष्ट रूप से यह दर्शाती हैं कि खुरवेश उर्फ पप्पु उर्फ पहलवान एक दु:साहसिक और घोर अपराधी है जिसकी गतिविधियाँ लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु प्रतिकूल हैं। जनता और संपत्ति के विरुद्ध उसके हिंसा के कृत्य देश के कानून के प्रति उसकी पूरी अवमानना को दर्शाते हैं। चूँकि वह आम तौर पर अपने साथ एक बन्दूक रखता है, लोग उसके विरुद्ध अभिसाक्ष्य देने से भयभीत होते हैं। उसकी निरंतर आपराधिक गतिविधियों ने समाज की शांति और प्रशांति को बाधित किया है।

कई मामलों में अपनी गिरफ्तारी और अभियोजन के बावजूद, खुरवेश उर्फ़ पप्पु उर्फ़ पहलवान ने स्वयं में सुधार नहीं किया है और अपनी आपराधिक गतिविधियों से विचलित नहीं हुआ है जो लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु अत्यधिक प्रतिकूल हैं।

वर्तमान में खुरवेश उर्फ़ पप्पु उर्फ़ पहलवान जेल से बाहर है। उसकी पिछली आपराधिक गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए इस बात की पूरी आशंका/आसन्न संभावना है कि वह फिर से इसी प्रकार की आपराधिक गतिविधियों में लिप्त होगा, जिससे लोक व्यवस्था के रखरखाव पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

उपरोक्त परिस्थितियों में लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु प्रतिकूल प्रभाव वाली इसी प्रकार की आपराधिक गतिविधियों को आगे बढ़ाने से रोकने के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980

की धारा 3 (2) के तहत उसे तत्काल प्रभाव से निरुद्ध करना आवश्यक हो गया है।"

10. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विकास अरोड़ा ने कहा कि आक्षेपित आदेश में उल्लिखित उपरोक्त आधार निवारक निरोध के मामले को उचित नहीं सिद्ध करते हैं। उनकी प्रस्तुति थी कि याचिकाकर्ता पर तुच्छ मामलों थोपे जाते हैं और यही कारण है कि इनमें से अधिकांश मामलों में दोषमुक्ति योग्यता के आधार पर होती है। यद्यपि, पूरे तथ्यों और विशेष रूप से उन मामलों में न्यायालयों के आदेशों पर जहां याचिकाकर्ता को गुण-दोष के आधार पर दोषमुक्त कर दिया गया था, सक्षम प्राधिकारी द्वारा भी विचार नहीं किया गया था क्योंकि उन निर्णयों को उनके समक्ष नहीं रखा गया था। अधिवक्ता ने तर्क दिया कि यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि केवल 5 मामलों पर ध्यान दिया गया था और 17 मामलों के संबंध में निर्णय जिनमें याचिकाकर्ता को दोषमुक्त कर दिया गया था, सक्षम प्राधिकारी के समक्ष नहीं रखे गए थे। उनकी आगे प्रस्तुति यह है कि ऐसा कोई मामला नहीं बनाया गया था कि याचिकाकर्ता ने साक्षियों को धमकी दी थी। उनकी प्रबल दलील यह थी कि याचिकाकर्ता के निरोध आदेश को पारित करते समय प्रत्यर्थी सं.1 द्वारा जिन पाँच मामलों के तथ्यों पर भरोसा किया गया था, वे भी निरोध आदेश को उचित नहीं सिद्ध करेंगे। पहले मामले के संबंध में, उनकी प्रस्तुति थी कि शनाख्त परेड पहले ही

आयोजित की जा चुकी थी और याचिकाकर्ता की पहचान नहीं की गई थी। दूसरे मामले में, उनकी प्रस्तुति थी कि याचिकाकर्ता को अग्रिम जमानत भी दी गई थी जो तथ्य यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध कुछ भी नहीं था। तीसरे मामले में पहले ही दोषमुक्त कर दिया गया है और इसलिए, याचिकाकर्ता के निरोध का आधार नहीं हो सकता, यह प्रस्तुति दी गई है। जहां तक चौथे मामले का संबंध है, याचिका यह थी कि यह पुलिस अधिकारियों के साथ विवाद से संबंधित है और प्रत्यर्थी यह तर्क नहीं दे सकता कि याचिकाकर्ता पुलिस अधिकारियों को आतंकित करने या प्रभावित करने की स्थिति में होगा जो उक्त मामले में साक्षी बनने जा रहे हैं। विद्वान अधिवक्ता ने बताया कि पाँचवाँ मामला केवल शांति भंग होने की कथित आशंका के संबंध में दं.प्र.सं. की धारा 107/151 के तहत था। इस प्रकार, उन्होंने प्रस्तुत किया कि सक्षम प्राधिकारी की टिप्पणियाँ कि "लंबित परीक्षण मामलों में साक्षियों को जेल के बाहर उनकी उपस्थिति से डराने की संभावना है" पूरी तरह से अनावश्यक थी, और किसी भी तर्कपूर्ण और विश्वसनीय सामग्री के समर्थन से रहित थी। अंतिम प्रस्तुति यह थी कि मुख्य निरोध आदेश असद्भावपूर्वक कार्य है और पुलिस अधिकारियों के कहने पर जवाबी हमला है, केवल इस कारण से कि याचिकाकर्ता इन पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध शिकायत कर रहा था जो याचिकाकर्ता को झूठे मामलों में

आलिप्त कर रहे थे। उन्होंने ऐसी शिकायतों का उल्लेख किया जो याचिका के साथ उपाबद्ध हैं।

11. प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित अतिरिक्त स्थायी अधिवक्ता श्री विकास पहवा ने निरोध आदेश के पारित होने को यह तर्क देते हुए उचित सिद्ध किया है कि संबंधित प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि वस्तुनिष्ठ मानदंड और संबंधित तत्व पर आधारित थी जिसकी प्राधिकरण द्वारा आदेश पारित करते समय जाँच की गई थी। उनकी प्रस्तुति थी कि आक्षेपित आदेश में प्रकट की गई समग्र परिस्थितियों से यह स्पष्ट होगा कि एक उचित राय बनाई गई थी कि याचिकाकर्ता एक दु:साहसिक चरित्र और क्षेत्र का एक घोर अपराधी था और लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु प्रतिकूल गतिविधियों में लिप्त था। उनके अनुसार, यह आदेश पारित करने का मुख्य कारण था। यद्यपि अन्य कारण भी दिए गए थे, अर्थात् कि लोग उसके विरुद्ध अभिसाक्ष्य देने से भयभीत होते हैं, उन्होंने याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता की प्रस्तुतियों को इस आधार पर स्वीकार किया कि उनकी प्रस्तुतियाँ पूरी तरह से दूसरे कारण पर आधारित था।

12. उन्होंने अपनी प्रस्तुति के समर्थन में विभिन्न निर्णयों का भी उल्लेख किया। जब 6 जनवरी, 2010 को इस मामले में तर्क सुना गया, तो उस समय प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विभिन्न निर्णयों का संदर्भ दिया गया था। तर्क के

समापन पर, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने अनुरोध किया कि उन्हें निर्णयों का संकलन दायर करने हेतु कुछ समय दिया जाए, जिस पर विद्वान अधिवक्ता भरोसा कर सकते हैं, क्योंकि उन्होंने बहस के समय अपने मामले के समर्थन में किसी भी मामले के कानून का उल्लेख नहीं किया था। मौखिक रूप से यह संकेत दिया गया था कि वह एक सप्ताह के भीतर ऐसा कर सकता है। हमने एक सप्ताह से अधिक समय तक इंतजार किया है, लेकिन याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा ऐसा कोई प्रयोग नहीं किया गया है। इसलिए, हम तर्क के समय हमारे सामने की गई प्रस्तुतियों के आधार पर आगे बढ़ते हैं, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है।

13. ***अशोक कुमार बनाम दिल्ली प्रशासन और अन्य (1982) 2 एस.सी.सी. 403*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि निवारक निरोध समाज को सुरक्षा प्रदान करने हेतु तैयार किया गया है। यह कहा गया था कि निवारक उपाय, भले ही उनमें व्यक्तियों पर कुछ संयम या कठिनाई शामिल हो, सजा की प्रकृति के किसी भी तरीके में भाग नहीं लेते हैं, लेकिन राज्य में रिष्टि को रोकने हेतु सावधानी के रूप में किए जाते हैं। इस तरह के निरोध हेतु औचित्य संदेह या उचित संभावना है और आपराधिक दोषसिद्धि नहीं है जिसे केवल कानूनी साक्ष्य द्वारा समर्थित किया जा सकता है। कार्यपालिका को उन मामलों में निवारक निरोध की अपनी शक्ति का सहारा लेने का अधिकार है जहां न्यायालय वास्तव

में संतुष्ट है कि कोई भी अभियोजन संभवतः निरुद्ध व्यक्ति के विरुद्ध सफल नहीं हो सकता है क्योंकि वह एक खतरनाक व्यक्ति है जिसके पास अति-भयभीत साक्षी हैं या जिसके विरुद्ध कोई भी अभिसाक्ष्य देने हेतु तैयार नहीं है।

14. न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में "लोक व्यवस्था" और "कानून और व्यवस्था" की अवधारणाओं के मध्य विभेद भी कियाः-

> “13. ‘लोक व्यवस्था' और 'कानून और व्यवस्था' के क्षेत्रों के बीच वास्तविक विभेद कृत्य की प्रकृति या गुणवत्ता में नहीं है, अपितु समाज तक इसकी पहुंच के स्तर और सीमा में है। 'कानून और व्यवस्था' और ‘लोक व्यवस्था' की दो अवधारणाओं के बीच विभेद ठीक है परंतु इसका अर्थ यह नही है कि कोई अतिव्याप्ति नहीं हो सकती। प्रकृति में समान किंतु विभिन्न संदर्भों और परिस्थितियों में किए गए कृत्य भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियाओं का कारण बन सकते हैं। एक मामले में यह केवल विशिष्ट व्यक्तियों को प्रभावित कर सकता है और इसलिए कानून और व्यवस्था की समस्या को स्पर्श कर सकता है, जबकि दूसरे में यह लोक व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है। इसलिए कृत्य अपने आप में अपनी गंभीरता का निर्धारक नहीं है। यह समुदाय के जीवन की सम गति को बाधित करने की कृत्य की क्षमता है जो इसे लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु प्रतिकूल बनाती है। वह परीक्षण वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में स्पष्ट रूप से पूरा होता है।

14. xxx xxx xxx xxx

15. xxx xxx xxx xxx

16. xxx xxx xxx xxx

17. जो अनिवार्य रूप से कानून और व्यवस्था से संबंधित समस्या है, वह दिल्ली के महानगरीय शहर में निर्दोष पीड़ितों पर शारीरिक हिंसा के अचानक विकीर्ण और आंतरायिक होने वाले कृत्यों के कारण गंभीर लोक अव्यवस्था का कारण बन सकती है। यह हिंसा उत्पन्न करने वाले किसी विशेष कृत्य द्वारा फैलाई गई आतंकी लहर की लंबाई, परिमाण और तीव्रता है जो इसे कानून और व्यवस्था से संबंधित लोक व्यवस्था को प्रभावित करने वाले कृत्य से अलग करती है। कुछ अपराध मुख्य रूप से विशिष्ट व्यक्तियों को चोट पहुँचाते हैं और बाद में सार्वजनिक हित को, जबकि अन्य प्रत्यक्ष रूप से सार्वजनिक हित को चोट पहुँचाते हैं और केवल व्यक्तियों को दूर से प्रभावित करते हैं। प्रश्न समाज के अस्तित्व का है और समस्या है नियंत्रण के तरीके की। जब भी ग्रेटर कैलाश, कालकाजी या लाजपत नगर जैसे विशेष आवासीय क्षेत्रों में गैंगस्टरों द्वारा सशस्त्र कृत्य किए जाते है और लोगों को कार, हाथ-घड़ी या नकदी जैसे उनके वस्तुओं से वंचित कर दिया जाता है, या महिलाओं को चाकू या रिवॉल्वर की नोक पर सोने की चेन या आभूषणों से मुक्त कर दिया जाता है, वे संगठित अपराध के शिकार बन जाते हैं। ऐसे व्यक्तियों की गतिविधियों पर निरंतर निगरानी रखने के अलावा

> पुलिस इस बारे में बहुत कुछ कर सकती है। निरोध के आधारों में गिनाए गए विशेष कार्य स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि निरुद्ध व्यक्तियों की गतिविधियां एक व्यापक क्षेत्र को समाहित करती हैं और लोक व्यवस्था की अवधारणा की परिरेखा में आती हैं।"

15. हमने इन टिप्पणियों को विशेष रूप से नोट किया है क्योंकि वे दिल्ली शहर से संबंधित हैं।

16. फिर भी अन्य निवारक निरोध के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने ***पुलिस आयुक्त और अन्य बनाम सी. अनीता*** (2004) 7 एस.सी.सी. 467 के मामले में "लोक व्यवस्था" "राज्य की सुरक्षा" और "कानून और व्यवस्था" के मध्य विभेद पर निम्नलिखित शब्दों में प्रकाश डाला:-

> “महत्वपूर्ण मुद्दा यह है कि क्या निरुद्ध व्यक्ति की गतिविधियाँ लोक व्यवस्था के प्रतिकूल थी। जब अभिव्यक्ति 'कानून और व्यवस्था' का दायरा काफी व्यापक है क्योंकि कानून का उल्लंघन हमेशा व्यवस्था को प्रभावित करता है। ‘लोक आदेश' का दायरा संकीर्ण है और लोक व्यवस्था का भी हो सकता है केवल ऐसे उल्लंघन से प्रभावित होना जो समुदाय या बड़े पैमाने पर जनता को प्रभावित करता हो। लोक व्यवस्था पूरे देश या यहां तक कि एक निर्दिष्ट इलाके को ध्यान में रखते हुए समुदाय के जीवन की सम गति है। 'कानून और व्यवस्था' और ‘लोक व्यवस्था' के क्षेत्रों के मध्य विभेद समाज पर प्रश्नगत कृत्य की पहुंच के स्तर और

सीमा में से एक है। यह समुदाय के जीवन की सम गति को बाधित करने की कृत्य की क्षमता है जो इसे सार्वजनिक व्यवस्था के रखरखाव हेतु प्रतिकूल बनाती है। यदि कोई उल्लंघन अपने प्रभाव में जनता के व्यापक स्पेक्ट्रम से अलग प्रत्यक्ष रूप से सम्मिलित कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित है, तो यह केवल कानून और व्यवस्था की समस्या उत्पन्न कर सकता है। यह अव्यवस्था के एक विशेष विस्फोट से उत्पन्न आतंकी लहर की लंबाई, परिमाण और तीव्रता है जो इसे 'कानून और व्यवस्था' से संबंधित 'लोक व्यवस्था' को प्रभावित करने वाले अधिनियम के रूप में अलग करने में सहायता करती है। पूछने का प्रश्न यह है: "क्या इससे समुदाय के वर्तमान जीवन में अशांति उत्पन्न होती है, जिससे लोक व्यवस्था में गड़बड़ी होती है या क्या यह समाज की शांति को छोड़कर केवल एक व्यक्ति को प्रभावित करता है"? इस सवाल का सामना हर हाल में इसके तथ्यों पर करना होगा।

8. "लोक व्यवस्था" को फ्रांसीसी में 'ऑर्ड्रे पब्लिक' कहते हैं और यह कानून और व्यवस्था के सामान्य रखरखाव से कहीं अधिक है। यह निर्धारित करने के लिए अपनाया जाने वाला परीक्षण कि क्या कोई कार्य कानून और व्यवस्था या लोक व्यवस्था को प्रभावित करता है, यह है: क्या यह समुदाय के वर्तमान जीवन में विघ्न उत्पन्न करता है जिससे लोक व्यवस्था में विघ्न होता है या क्या यह केवल एक व्यक्ति को प्रभावित करता है जिससे समाज की शांति अबाधित रहे? (देखें *कनु बिस्वास बनाम पश्चिम राज्य बंगाल (1972) 3 एससीसी 831*)

9. "लोक व्यवस्था" लोक सुरक्षा और शांति का पर्याय है: "यह राष्ट्रीय उथल-पुथल, जैसे क्रांति, नागरिक संघर्ष, युद्ध, राज्य की सुरक्षा को प्रभावित करने वाले स्थानीय महत्व के उल्लंघन से जुड़ी अव्यवस्था की अनुपस्थिति है"। यदि लोक व्यवस्था में गड़बड़ी होती है, तो इससे लोक अव्यवस्था अवश्य होगी। शांति के प्रत्येक उल्लंघन से लोक अव्यवस्था नहीं होती है। जब दो शराबी झगड़ते और लड़ते हैं तो अव्यवस्था तो होती ही है किंतु लोक अव्यवस्था नहीं होती। उनसे कानून और व्यवस्था बनाए रखने की शक्तियों के तहत निपटा जा सकता है, लेकिन इस आधार पर निरुद्ध नहीं किया जा सकता कि वे लोक व्यवस्था में विघ्न डाल रहे थे। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कानून और व्यवस्था बनाए रखने से भी अव्यवस्था को रोका जा सकता है, लेकिन अव्यवस्था एक व्यापक विस्तार है, जिसमें एक छोर पर छोटा-स विघ्न और दूसरे छोर पर सबसे गंभीर और विनाशकारी घटनाएं शामिल हैं। (देखें *डॉ. राम मनोहर लोहिया (डॉ.) बनाम बिहार राज्य* (1966) 1 एससीआर 709; 1966 सीआरएल.एलजे 608)

10. 'लोक व्यवस्था', 'कानून और व्यवस्था' और 'राज्य की सुरक्षा' काल्पनिक रूप से तीन संकेंद्रित वृत्त बनाते हैं, सबसे बड़ा कानून और व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है, अगला लोक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है और सबसे छोटा राज्य की सुरक्षा का प्रतिनिधित्व करता है। कानून का प्रत्येक व्यतिक्रमण आवश्यक रूप से व्यवस्था को प्रभावित करता है, लेकिन कानून

और व्यवस्था को प्रभावित करने वाला कोई कार्य आवश्यक रूप से लोक व्यवस्था को भी प्रभावित नहीं कर सकता। इसी प्रकार, कोई कार्य लोक व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है, परंतु यह आवश्यक नहीं कि वह राज्य की सुरक्षा को प्रभावित करे। असली परीक्षा प्रकार नहीं है, बल्कि कृत्य की क्षमता है। एक कृत्य केवल व्यक्तियों को प्रभावित कर सकता है, जबकि दूसरा, समान प्रकार का होते हुए भी, इतना प्रभाव डाल सकता है कि यह समुदाय के जीवन की सम गति को बिगाड़ देगा। इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई अतिव्याप्ति नहीं हो सकती है, इस अर्थ में कि कोई कार्य एक ही समय में दो अवधारणाओं के अंतर्गत नहीं आ सकता। उदाहरण के लिए, लोक व्यवस्था को प्रभावित करने वाला कोई कार्य लोक व्यवस्था और राज्य की सुरक्षा दोनों को प्रभावित कर सकता है। [देखें *किशोरी मोहन बेरा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1972) 3 एससीसी 845 : एआईआर1972एससी1749; पुष्कर मुखर्जी बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1969) 1 एससीसी 10; अरुण घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1970) 1 एससीसी 98; नागेंद्र नाथ मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1972) 1 एससीसी 498]।*

17. न्यायालय ने इस बात पर प्रकाश डाला कि 'कानून और व्यवस्था' और 'लोक व्यवस्था' के क्षेत्रों के बीच वास्तविक अंतर केवल कृत्य की प्रकृति या गुणवत्ता में निहित नहीं है, अपितु समाज पर इसकी पहुंच के स्तर और सीमा में भी है।

18. इस सिद्धांत को मौजूदा मामले में लागू करते हुए, न्यायालय ने निम्नलिखित निबंधनों में निरोध आदेश को कायम रखा:-

> “14. निरोध आदेश को पढ़ने से पता चलता है कि निरुद्ध व्यक्ति एक हिस्ट्रीशीटर(कई अपराधों में लिप्त व्यक्ति) था, जिसके विरूद्ध 30 से अधिक मामले दर्ज किए गए थे। दो विशिष्ट उदाहरणों पर प्रकाश डाला गया जो उसके कृत्यों की गंभीरता का संकेत देते थे। निरोध के आधार के पैराग्राफ 3 और 6 इस प्रकार हैं:
>
> > "3- क्षेत्र में आपके गैरकानूनी कृत्य जनता के मन में आतंक पैदा कर रहे हैं और कानून का पालन करने वाले नागरिक डर के कारण भूखंड/भूमि खरीदने और घर बनाने से डरते हैं और वे आपके विरुद्ध पुलिस में कोई शिकायत दर्ज करने या कोई अभ्यावेदन देने के लिए आगे आने से भी डरते हैं।
> >
> > 6- इस प्रकार, आप गुंडागर्दी में लिप्त हैं, जमीन हड़प रहे हैं और आपकी गतिविधियां जनता में असुरक्षा और भय की भावना उत्पन्न कर रही हैं और इस प्रकार लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली हैं।’’
>
> 15. जब निरोध के आधार सटीक, उपयुक्त, अनुमानित और प्रासंगिक हों तो न्यायालय निरोध प्राधिकरण की राय के स्थान पर अपनी राय नहीं दे सकता। यहाँ भी यही स्थिति है। कोई

अस्पष्टता या नीरसता नहीं है। घटनाओं को निरोध के आधारों के साथ-साथ उसके प्रभाव के निश्चित संकेत के साथ उजागर किया गया है, जिसे ऊपर उद्धृत निरोध के आधारों के पैराग्राफ 3 में सटीक रूप से बताया गया है। दोनों घटनाओं से पता चलता है कि निरुद्ध व्यक्ति किस प्रकार से भूमि खरीदने वाले से पैसे की मांग कर रहा था और मांग पूरी न करने पर जान से मारने की धमकी दे रहा था। ये घटनाएँ निरोध प्राधिकरण द्वारा प्राप्त व्यक्तिपरक संतुष्टि को स्पष्ट रूप से प्रमाणित करती हैं कि कैसे निरुद्ध व्यक्ति के कृत्य लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु प्रतिकूल थे। उच्च न्यायालय द्वारा इन पहलुओं पर विचार नहीं किया गया है। निरुद्ध व्यक्ति के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि यदि ऐसा है भी तो उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त नहीं किया जाना चाहिए और इस मामले को नए निर्णय हेतु वापस भेजा जा सकता है। हमें ऐसी दलील में कोई सार नजर नहीं आता। निरोध आदेश का एक विशिष्ट उद्देश्य होता है। ऐसा होने पर, हम उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हैं। निरुद्ध व्यक्ति को सजा की शेष अवधि काटने हेतु तुरंत हिरासत में अभ्यर्पण करना होगा। अपील अनुमत की जाती है।"

19. जब हम इन सिद्धांतों को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू करते हैं, तो अप्रतिरोध्य निष्कर्ष यहां भी निरोध आदेश को बनाए रखना होगा। हम शुरुआत में बता सकते हैं कि याचिकाकर्ता हेतु विद्वान अधिवक्ता की दलीलों का पूरा जोर

एक पहलू तक ही सीमित था, अर्थात् याचिकाकर्ता की उपस्थिति से साक्षियों को भयभीत करने की संभावना नहीं थी। यद्यपि हम बाद में इस तर्क पर लौटेंगे, लेकिन यह बताना आवश्यक है कि आक्षेपित आदेश केवल इसी आधार पर पारित नहीं किया गया है। यद्यपि हम बाद के चरण में इस तर्क पर वापस आएंगे, यह इंगित करना आवश्यक है कि आक्षेपित आदेश केवल इस आधार पर पारित नहीं किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध दर्ज 32 आपराधिक मामलों/गतिविधियों का विवरण देने के बाद, आक्षेपित आदेश के पृष्ठ 2 पर अगले पैराग्राफ में, यह टिप्पणी की जाती है कि याचिकाकर्ता इतना हताश और खतरनाक अपराधी है कि लंबित विचारण न्यायालय के मामलों में साक्षियों को जेल के बाहर उसकी उपस्थिति से भयभीत करने की संभावना है। यद्यपि, पांच मामलों का विवरण देने के बाद, निरोध आदेश निम्नलिखित पर आधारित है:-

> "उपर्युक्त आपराधिक गतिविधियों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि खुरवेश उर्फ पप्पू उर्फ पहलवान एक दु:साहसिक और कठोर अपराधी है जिसकी गतिविधियाँ लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु हानिकारक हैं। जनता और संपत्ति के विरुद्ध हिंसा के उसके कृत्य देश के कानून के प्रति उसकी पूरी अवमानना को दर्शाते हैं। चूँकि वह आमतौर पर अपने साथ बन्दूक रखता है,

इसलिए लोग उसके विरुद्ध अभिसाक्ष्य देने से डरते हैं। उसकी निरंतर आपराधिक गतिविधियों ने समाज की शांति-व्यवस्था को भंग कर दिया है।"

20. आधारभूत और मूल आधार जिस पर आदेश आधारित है वह यह है कि याचिकाकर्ता एक दु:साहसिक और घोर अपराधी है जिसकी गतिविधियाँ लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु प्रतिकूल हैं। यह भी उल्लेख किया गया है कि उसकी निरंतर आपराधिक गतिविधियों ने समाज की शांति-व्यवस्था में विघ्न उत्पन्न किया है। ऐसी आशंका व्यक्त की गई है कि इस बात की संभावना है कि याचिकाकर्ता इसी प्रकार की आपराधिक गतिविधियों में लिप्त होगा "जो लोक व्यवस्था के रखरखाव पर प्रतिकूल प्रभाव डालेंगी"।

21. जब आदेश के इस भाग और उपरोक्त निर्णयों में शीर्ष न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का सामना किया गया, तो याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता शायद ही कोई ठोस जवाब दे सके। इस स्तर पर उन्होंने उल्लेख किया था कि यदि कोई निर्णय है जिस पर वह भरोसा करना चाहते हैं, तो वह उसकी प्रति प्रदान करेंगे, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया है। उपरोक्त निर्णयों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों के अनुसार और इस मामले के तथ्यों पर इसे लागू करते हुए, आक्षेपित आदेश को उचित माना जाता है। इस संदर्भ में, हम ***<u>मोहम्मद अफजल</u> बनाम <u>भारत संघ और अन्य</u> 2004 सीआरएल.एल.जे. 3461*** के

मामले में इस न्यायालय के खंडपीठ के निर्णय का भी उल्लेख कर सकते हैं, उस मामले में निरोध आदेश लगभग समान परिस्थितियों में पारित किया गया था और इस न्यायालय ने पूर्वोक्त निर्णय में इसे बनाए रखा था। उस मामले में भी, निरोध आदेश में प्रावधान था कि निरुद्ध व्यक्ति ने वर्ष 1990 में लगभग 19 वर्ष की आयु में अपनी आपराधिक गतिविधियाँ शुरू की थीं और आधार में सूचीबद्ध 18 आपराधिक मामलों में सम्मिलित था। अधिकांश मामलों में उसे दोषमुक्त/उन्मोचित कर दिया गया था। 5 मामलों में वह विचारण का सामना कर रहा था और निरोध आदेश पारित होने पर 3 मामलों की जाँच चल रही थी। यद्यपि निरोध के आधार पर 18 मामलों का संदर्भ दिया गया था, लेकिन जिन 2 मामलों की जांच चल रही थी, उन्हें निरोध के आधार पर विशेष रूप से भरोसा किया गया था। इस तथ्य के आधार पर, निरोध प्राधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि उक्त आपराधिक गतिविधियों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि निरुद्ध व्यक्ति एक दु:साहसिक और खतरनाक अपराधी था जिसकी गतिविधियाँ लोक व्यवस्था के रखरखाव हेतु प्रतिकूल थीं; जनता और संपत्ति के विरुद्ध उसकी हिंसा की हरकतें देश के कानून के प्रति उसकी पूरी अवमानना को दर्शाती हैं; उसके पास आमतौर पर आग्नेयास्त्र पाए जाते थे; अभियोजन पक्ष के साक्षी न्यायालय में उसके विरुद्ध अभिसाक्ष्य देने से बेहद डरे हुए थे; उसकी आपराधिक गतिविधियों ने समाज की सामान्य स्थिति को बिगाड़ दिया था और वह इतना

खतरनाक और दु:साहसिक अपराधी था कि उसने पुलिस अधिकारियों पर हमला करने में भी उन्हें नहीं बख्शा। "लोक व्यवस्था" और "कानून और व्यवस्था" [जो प्रयोग हम पहले ही ऊपर कर चुके हैं] पर कानून की व्याख्या पर ध्यान देते हुए, रिट याचिका को निम्नलिखित शब्दों में निरोध आदेश को बरकरार रखते हुए खारिज कर दिया गया थाः-

> “13. उपरोक्त निर्णयों से उत्पन्न कानूनी स्थिति की कसौटी पर निरोध के आधारों का परीक्षण करते हुए, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, हमारा विचार है कि उपरोक्त निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए निरोध प्राधिकरण द्वारा जिन गतिविधियों पर भरोसा किया गया है, उन्हें केवल "कानून और व्यवस्था" की गड़बड़ी नहीं कहा जा सकता है। जैसा कि निरोध के आधार में उल्लेख किया गया है, याचिकाकर्ता की आपराधिक गतिविधियां आपराधिक धमकी, लोक सेवकों को उनके आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में बाधा डालने आदि से संबंधित हैं, जो स्पष्ट रूप से, किसी एक व्यक्ति के विरुद्ध निर्देशित नहीं हैं, बल्कि बड़े पैमाने पर जनता के विरुद्ध हैं, जो समुदाय के जीवन की गति को बाधित करने का प्रभाव डालती हैं और इस प्रकार, "लोक व्यवस्था" भंग करना है। इस प्रकार, हम यह मानने में असमर्थ हैं कि निरोध प्राधिकरण के पास निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई तथ्य नहीं था, यह कहने के लिए कि याचिकाकर्ता दु:साहसिक और खतरनाक चरित्र का व्यक्ति है और समाज के लिए खतरा

है। निरोध प्राधिकरण का यह मानना उचित है कि आपराधिक मामलों में विचारण के परिणाम उसके खतरनाक चरित्र के कारण थे क्योंकि प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित व्यक्ति भी उसके विरुद्ध साक्ष्य देने हेतु आगे नहीं आ रहे थे। इसलिए, हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि निरोध के आधार पर गिनाए गए याचिकाकर्ता की गतिविधियों के उदाहरण स्पष्ट रूप से यह दर्शाते हैं कि उसकी गतिविधियां एक व्यापक क्षेत्र को समाहित करती हैं और "लोक व्यवस्था" की अवधारणा के दायरे में आती हैं और निरोध प्राधिकरण को याचिकाकर्ता के विरुद्ध निरोध के आक्षेपित आदेश को पारित करना कानून में उचित ठहराया गया था।

14. जहां तक याचिकाकर्ता के अधिवक्ता की इस दलील का संबंध है कि आक्षेपित आदेश निष्फल हुआ है क्योंकि यह याचिकाकर्ता को दी गई जमानत को विफल करने हेतु असद्भावपूर्व आशय से पारित किया गया है, हमारा विचार है कि विवाद में कोई सार नहीं है। यह शीर्ष न्यायालय के निर्णयों की एक श्रेणी द्वारा स्थापित किया गया है कि भले ही कोई व्यक्ति अभिरक्षा में हो, तब भी निरोध आदेश वैध रूप से पारित किया जा सकता है यदि आदेश पारित करने वाले प्राधिकरण को उसके अभिरक्षा में होने के तथ्य के बारे में पता हो और उसके पास उसके समक्ष तथ्यों के आधार पर विश्वास करने का कारण हो, कि उसे जमानत पर रिहा किए जाने की आसन्न संभावना है और इस तरह रिहा होने पर, वह पूरी संभावना में प्रतिकूल प्रभाव

डालने वाली गतिविधियों में शामिल होगा और उसे ऐसा करने से रोकने के लिए, उसे निरुद्ध किया जाना आवश्यक है। निरोध आदेश को इस आधार पर निरस्त नहीं किया जा सकता कि प्राधिकरण हेतु उचित तरीका जमानत याचिका का विरोध करना था और यदि इस प्रकार के विरोध के बावजूद जमानत दी जाती है, तो ऊपरी अदालत के समक्ष इस पर सवाल उठाया जाए, जैसा कि याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा अनुरोध किया गया है। (देखें:कमरुन्निसा बनाम भारत संघ (1991) 1 एस.सी.सी 128:1991 सी.आर.एल.एल.जे 2058 और योगेंद्र मुरारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. 1988 एस.सी. 1335:1988 सी.आर.एल.एल.जे 1825)। उपलब्ध तथ्यों के आधार पर, हम याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की इस दलील को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि याचिकाकर्ता को जमानत देने के न्यायालय के आदेश को विफल करने के लिए ही निरोध आक्षेपित आदेश पारित किया गया था।"

22. वर्तमान मामले में, हम यह भी पाते हैं कि क्रम संख्या 23, 24, 25, 27, 28, 29, 31 और 32 पर उल्लिखित मामले अभी भी विचारण हेतु लंबित हैं। ऊपर उल्लिखित पिछले चार मामलों में, साक्ष्य अभी तक दर्ज नहीं किया गया है। निरोध प्राधिकरण की यह आशंका कि चूंकि याचिकाकर्ता अपने साथ आग्नेयास्त्र रखता है, लोग उसके विरूद्ध अभिसाक्ष्य देने से भयभीत होते हैं और इसलिए,

'जेल के बाहर उसकी उपस्थिति से साक्षियों के भयभीत होने की संभावना है', इसे निराधार राय नहीं कहा जा सकता है।

23. इस प्रकार, हम पाते हैं कि वर्तमान रिट याचिका पूरी तरह से किसी भी योग्यता से रहित है और इसलिए, इसे खारिज किया जाता है। कोई जुर्माना नहीं।

(ए.के. सिकरी)
न्यायाधीश

(अजीत भरीहोक)
न्यायाधीश

25 जनवरी, 2010

एसके

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा/ समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*